उत्तरपाड़ा अभिभाषण

श्रीअरविन्द

उत्तरपाड़ा-अभिभाषण

श्रीअरविन्द-ग्रंथमाला
१६ र्‍यू देवासैं द रिश्मों
पांडीचेरी

अनुवादक—मदनगोपाल गाड़ोदिया

प्रकाशक—चन्द्रदीप
श्रीअरविन्द-ग्रन्थमाला
१६ र्‌यू देबासैं द रिश्मों,
पांडीचेरी
16, Rue Desbassin de Richemont
Pondicherry

प्रथम संस्करण १५००

मूल्य ।=)

श्रीअरविन्द आश्रम मुद्रणालय पांडीचेरी
W.D. No. 72, 16-4-46, 1500



श्री अरविन्द

उत्तरपाड़ा-अभिभाषण

जिस समय मुझे आपकी सभाके इस वार्षिक अधिवेशनपर वक्तृता देनेके लिये कहा गया, उस समय मेरी यह इच्छा थी कि आजके लिये जो विषय निर्वाचित हुआ है उसी विषयपर, अर्थात् हिन्दूधर्मपर मैं कुछ कहूंगा। मैं नहीं जानता कि उस इच्छाको मैं पूरी कर सकूंगा या नहीं; क्योंकि जैसे ही मैं यहां आकर बैठा वैसे ही मेरे मनमें एक वाणी आयी और इस वाणीको मुझे आपको, सारी भारतजातिको सुनाना है। यह वाणी मुझे पहले-पहल जेलमें सुनायी दी थी और उसे अपने देशवासियोंको सुनानेके लिये मैं जेलसे बाहर आया हूं।

गत बार जब मैं यहां आया था उसे एक वर्षसे ऊपर हो चुका है। उस बार जब मैं आया था तब मैं अकेला ही नहीं था; तब मेरी बगलमें बैठे हुए थे राष्ट्रीयताके एक परम शक्तिमान् दूत। उस समय वे उस एकान्तवाससे लौटकर आये थे जहां उन्हें भगवान्ने इसलिये भेजा था कि वे अपनी कालकोठरीकी निस्तब्धता और निर्जनतामें उस वाणीको सुन सकें जिसे उन्हें सुनाना था। उस समय आप

हजारोंकी संख्यामें उन्हींका स्वागत करने आये थे। आज वे हमसे बहुत दूर हैं, वे हमसे हजारों मीलके फासलेपर हैं। दूसरे-दूसरे लोग भी, जिन्हें मैं अपने साथ काम करते हुए पाता था, आज अनुपस्थित हैं। देशव्यापी जो तूफान आया उसने उन्हें दूर-दूर बिखेर दिया है। अबकी बार मैंने भी एक वर्षका समय निर्जनवासमें बिताया है, और अब बाहर आकर देखता हूं कि सब कुछ बदल गया है। मेरे एक साथी जो सदा मेरी बगलमें बैठते थे, जो सदा मेरे काममें सहयोग दिया करते थे, आज बर्मामें कैद हैं, दूसरे सहयोगी उत्तरप्रदेशमें नजरबन्द होकर सड़ रहे हैं। जब मैं बाहर आया तो मैंने अपने चारों ओर देखा, जिनसे मैं मन्त्रणा और प्रेरणा पानेका अभ्यस्त था उन्हें खोजा। वे मुझे नहीं मिले। केवल इतना ही नहीं, इससे भी कुछ अधिक मैंने देखा। जब मैं जेल गया था तब सारा देश वन्देमातरम्की ध्वनिसे गूंज रहा था, उसमें एक राष्ट्र बननेकी आशा संजीवित थी, यह उन करोड़ों मनुष्योंकी आशा थी जो गिरी हुई दशासे अभी-अभी ऊपर उठे थे। जब मैं जेलसे बाहर आया तो मैंने इस ध्वनिको सुननेके लिये अपने कान खड़े किये, किंतु इसके स्थानमें दिखायी दी निस्तब्धता। देशमें निश्चेष्टता छा गयी थी और लोग हक्के-बक्केसे दिखायी दिये; क्योंकि हमारे सामने भविष्यकी कल्पनासे पूर्ण ईश्वर-

का जो उज्ज्वल स्वर्ग था उसके बदले हमारे सिरपर एक मेघावृत आकाश दिखायी दिया जहांसे मानवीय वज्र और विद्युत्की वर्षा हो रही थी। किसीको यह दिखायी नहीं देता था कि किस ओर चलना चाहिये और चारों ओरसे यही प्रश्न उठता था कि "अब हम क्या करें? हम क्या कर सकते हैं?" मुझे भी यह पता नहीं था कि अब किधर चलना चाहिये, अब क्या करना चाहिये। पर एक बात मैं जानता था कि ईश्वरकी जिस महती शक्तिने उस ध्वनिको जगाया था, उस आशाका संचार किया था उसी शक्तिने इस निस्तब्धताको भेजा है। जो ईश्वर उस कोलाहल और आंदोलनमें थे, वे ही इस विश्राम और निस्तब्धतामें भी हैं। ईश्वरने इसको इसलिये भेजा है कि राष्ट्र क्षणभरके लिये आत्मसंवरण करे और अपने अन्दर अनुसंधान करे और जाने कि उनकी इच्छा क्या है। इस निस्तब्धतासे मैं निरुत्साहित नहीं हुआ हूं, क्योंकि कारागारमें निस्तब्धताके साथ मेरा परिचय हो चुका है और मैं जानता हूं कि अपनी कैदके एक वर्षके लम्बे समयमें इस उपर्युक्त शिक्षाको स्वयं मैंने भी विश्राम और निस्तब्धताके द्वारा ही लाभ किया है। जब विपिनचंद्र पाल जेलसे बाहर आये थे तब वह एक संदेश लेकर आये थे और वह एक अनुप्रेरित संदेश था। उन्होंने जो वक्तृता यहां दी थी वह मुझे याद है। उस वक्तृताका

मर्म और अभिप्राय उतना राजनीतिक नहीं था जितना धार्मिक था। उन्होंने उस समय जेलके अन्दर मिली हुई अपनी अनुभूतिकी, हम सबके अन्दर जो भगवान् हैं, राष्ट्रके अन्दर जो परमेश्वर हैं उनकी बात कही थी। और अपने बादके व्याख्यानोंमें भी उन्होंने यह कहा था कि इस आंदोलनमें जो शक्ति काम कर रही है वह सामान्य शक्तिकी अपेक्षा महत्तर है और इसका जो हेतु है वह भी साधारण हेतुसे कहीं बढ़कर है। आज मैं भी आपसे पुनः मिल रहा हूं, मैं भी जेलसे बाहर आया हूं और फिर आप ही, इस उत्तरपाड़ाके अधिवासी ही, मेरा सबसे पहले स्वागत कर रहे हैं, किसी राजनीतिक सभामें नहीं, बल्कि उस समितिकी सभामें जिसका उद्देश्य है धर्मका संरक्षण। जिस संदेशको विपिनचंद्र पालने बक्सर जेलमें प्राप्त किया था उसे ही भगवान्‌ने मुझे अलीपुरमें दिया है। मेरे बारह महीनेके कारावासमें दिन-प्रति-दिन भगवान्‌ने मुझे उस ज्ञानको ही दिया है और अब यह आदेश दिया है कि मैं जेलसे बाहर आकर आपको उसे ही सुनाऊं।

मैं जानता था कि मैं जेलसे बाहर निकलूंगा। यह वर्षभरका अवरोध केवल एक वर्षके एकांतवास और साधनाके लिये था। भला किसीके लिये यह कैसे संभव होता कि वह मुझे जेलमें उतने दिनोंसे अधिक रोक रखे जितने दिन कि

भगवान्‌के हेतुको सिद्ध करनेके लिये आवश्यक थे? उन्होंने मुझे कहनेके लिये एक वाणी दी है और करनेके लिये एक काम, और मैं यह जानता था कि जबतक वह वाणी सुना नहीं दी जाती तबतक कोई मानव-शक्ति मुझे चुप नहीं कर सकती, जबतक वह काम नहीं हो जाता तबतक कोई मानव-शक्ति भगवान्‌के यंत्रको नहीं अटका सकती, फिर वह यंत्र कितना ही दुर्बल, कितना ही क्षुद्र क्यों न हो। अब जब कि मैं बाहर आ गया हूं, इन चंद मिनटोंके अंदर भी मुझे एक ऐसी वाणी सुझायी गयी है जिसे कहनेकी मेरी कोई इच्छा नहीं थी। मेरे मनमें जो कुछ था उसे भगवान्‌ने निकालकर फेंक दिया है और मैं जो कुछ बोल रहा हूं वह एक प्रेरणाके वशीभूत होकर, बाध्य होकर ही बोल रहा हूं।

जब मैं गिरफ्तार किया गया और जल्दी-जल्दी लाल-बाजारकी हाजतमें पहुंचाया गया था तब मेरी श्रद्धा क्षणभरके लिये डिग गयी थी, क्योंकि उस समय मैं भगवान्‌की इच्छाके मर्मको नहीं जान पाया था। इसलिये मैं क्षणभरके लिये विचलित हो गया और अपने हृदयमें भगवान्‌को पुकारकर कहा कि "यह क्या हुआ? मेरा यह विश्वास था कि मुझे अपने देशवासियोंके लिये कोई विशेष काम करना है और जबतक वह काम पूरा नहीं हो जाता तबतक तुम मेरी रक्षा करोगे। तब फिर मैं यहां क्यों हूं और वह भी इस प्रकारके अभि-

योगमें अभियुक्त होकर ?" एक दिन बीता, दो दिन बीते, तीन दिन बीते, और तब मेरे अंदरसे एक आवाज आयी कि, "ठहरो और देखो कि क्या होता है।" तब मैं शांत हो गया और प्रतीक्षा करने लगा। मैं लालबाजार थानेसे अलीपुर जेलमें भेजा गया और वहां मुझे एक महीनेके लिये मनुष्योंसे दूर एक निर्जन कालकोठरीमें रखा गया। वहां मैं अपने अन्दर विद्यमान भगवान्‌की वाणी सुननेके लिये, वे मुझे क्या कहना चाहते हैं यह जाननेके लिये और मुझे क्या करना होगा यह समझ लेनेके लिये रात-दिन प्रतीक्षा करने लगा। इस एकान्तवासमें ही मुझे सबसे पहली अनुभूति हुई, पहली शिक्षा प्राप्त हुई। उस समय मुझे याद आया कि मेरी गिरफ्तारीके एक महीने या उससे भी कुछ पहले मुझे यह आदेश मिला था कि मैं अपने सारे कर्म छोड़ दूं, एकान्तवासमें चला जाऊं और अपने अन्दर अनुसन्धान करूं जिससे कि मैं भगवान्‌के साथ घनिष्ठतर भावसे योगयुक्त हो सकूं। मैं दुर्बल था और उस आदेशको स्वीकार न कर सका। मुझे अपना कार्य बहुत प्रिय था और हृदयमें इस बातका अभिमान था कि यदि मैं न होऊं तो इस कामको धक्का पहुंचेगा, यहांतक कि यह असफल और बन्द भी हो जायगा; इसलिये मुझे उसे नहीं छोड़ना चाहिये। ऐसा बोध हुआ कि वे मुझसे फिर बोले और उन्होंने कहा कि, "जिन बंधनों-

को तोड़नेकी शक्ति तुममें नहीं थी उन्हें मैंने तुम्हारे लिये तोड़ दिया है, क्योंकि मेरी यह इच्छा नहीं है, न कभी मेरी यह इच्छा थी ही कि वे कार्य जारी रहें। तुम्हारे करनेके लिये मैंने दूसरा काम चुन रखा है और उसीके लिये मैं तुम्हें यहां लाया हूं, इसलिये ले आया हूं कि मैं तुम्हें वह बात सिखा दूं जिसे तुम स्वयं नहीं सीख सके और अपने कामके लिये तुम्हें तैयार कर लूं।" इसके बाद भगवान्ने मेरे हाथोंमें गीता रख दी। उनकी शक्ति मुझमें प्रवेश कर गयी और मैं गीताकी साधना करनेमें समर्थ हुआ। मुझे केवल बुद्धिद्वारा ही नहीं, बल्कि अनुभूतिद्वारा यह उपलब्ध करना पड़ा कि श्रीकृष्णकी अर्जुनसे क्या मांग थी और वे उन लोगोंसे क्या मांगते हैं जो उनका कार्य करनेकी आकांक्षा रखते हैं, अर्थात् जुगुप्सा और वासना-कामनासे मुक्त होना होगा, फलकी इच्छा न रखकर भगवान्के लिये कर्म करना होगा, अपनी इच्छाका त्याग करना होगा और निश्चेष्ट तथा सच्चा यन्त्र बनकर भगवान्के हाथोंमें रहना होगा, ऊंच और नीच, मित्र और शत्रु, सफलता और विफलताके प्रति समदृष्टि रखनी होगी और फिर भी उनके कार्यमें कोई अवहेलना न होगी। मैंने यह उपलब्ध किया कि हिन्दूधर्मका अभिप्राय क्या है। बहुधा हम हिन्दूधर्म, सनातनधर्मकी बातें

किया करते हैं, किन्तु वास्तवमें हममेंसे थोड़से इने-गिने लोग ही यह जानते हैं कि यह धर्म क्या है। अन्यान्य धर्म मुख्यत: विश्वासपर अवलम्बित हैं और उनको स्वीकार कर लेना ही यथेष्ट होता है, किन्तु सनातनधर्म तो स्वयं जीवन है, यह केवल विश्वास करनेकी ही चीज नहीं है, यह तो अपने जीवनमें उतारनेकी चीज है। यही वह धर्म है जिसका लालन-पालन मानव-जातिके कल्याणके लिये पुराकालसे इस प्रायद्वीपके एकांतवासमें होता आ रहा है। इसी धर्मको देनेके लिये भारत उठ रहा है। भारत-वर्ष, दूसरे देशोंकी तरह, अपने लिये ही या इसलिये नहीं उठ रहा है कि जब वह सबल हो जाय तो दुर्बलोंको पददलित करे। जो सनातन ज्योति उसे थातीके तौरपर सौंपी गयी है उसे संसारमें फैलानेके लिये ही वह उठ रहा है। भारतका जीवन सदा ही मानव-जातिके लिये रहा है, अपने लिये नहीं और उसे जो महान् होना है वह भी अपने लिये नहीं बल्कि मानव-जातिके लिये होना है।

अतएव, भगवान्‌ने जो दूसरी वस्तु मुझे दिखा दी वह यह थी—उन्होंने हिन्दूधर्मके मूल सत्यका मुझे साक्षात्कार करा दिया। उन्होंने मेरे जेलरोंके दिलको मेरी ओर घुमा दिया और उन लोगोंने उस जेलके प्रधान अंग्रेज अधिकारीसे कहा कि "ये कालकोठरीके कारावासमें

बहुत ही कष्ट पा रहे हैं; कम-से-कम इन्हें सुबह-शाम आध-आध घण्टा कोठरीके बाहर टहलनेकी आज्ञा दी जाय।" यह आज्ञा हो गयी और जब मैं टहल रहा था तब भगवान्‌की शक्तिने पुनः मेरे अन्दर प्रवेश किया। मैंने अपनेको मनुष्योंसे अलग करनेवाले जेलकी ओर दृष्टि डाली और देखा कि अब मैं उसकी ऊंची दीवारोंके अन्दर बन्द नहीं हूं; मुझे तो अब घेरे हुए थे वासुदेव। मेरी कालकोठरीके सामने जो पेड़ था उसकी शाखाओंके नीचे मैं टहल रहा था, पर वहां अब पेड़ नहीं था, मुझे प्रतीत हुआ कि वह वासुदेव हैं; मैंने देखा कि वहां अब स्वयं श्रीकृष्ण खड़े हैं और मेरे ऊपर अपनी छाया किये हुए हैं। मैंने अपनी कालकोठरीके सीखचोंकी ओर देखा, उन झरोखोंकी ओर देखा, जो दरवाजेका काम कर रहे थे और फिर वहां भी वासुदेवको देखा। स्वयं नारायण ही सन्तरी बनकर पहरा दे रहे थे। अब मैं उन मोटे कम्बलों-पर लेट गया जो मुझे पलङ्गकी जगह मिले थे और यह अनुभव किया कि मेरे सखा, मेरे प्रेमास्पद श्रीकृष्ण मुझे अपनी बाहुओंमें लिये हुए हैं। मुझे जो गभीरतर दृष्टि उन्होंने दी थी उसका यह पहला प्रयोग था। मैंने जेलके कैदियों—चोरों, हत्यारों और बदमाशोंकी ओर देखा और जब मैंने उनकी ओर देखा, तब वासुदेव दिखायी पड़े,

उन मलिन आत्माओं और अपव्ययवहृत शरीरोंमें मुझे नारायण मिले। उन चोरों और डाकुओंमेंसे बहुतोंने अपनी सहानुभूति और दयाके द्वारा मुझे लज्जित कर दिया, इस विपरीत परिस्थितिको भेदकर उनके अन्दर मानवता विजयी हुई थी। इनमेंसे एक आदमीको मैंने विशेष रूपसे देखा जो मुझे एक सन्त मालूम हुआ, जो हमारे देशका एक किसान था और जो लिखना पढ़ना नहीं जानता था, जिसे डकैतीके अभियोगमें दस वर्षका कठोर दण्ड मिला था, यह उनमेंसे एक व्यक्ति था जिन्हें हम वर्गके मिथ्याभिमानमें आकर "छोटा आदमी" कहा करते हैं। एक बार फिर भगवान् मुझसे बोले, उन्होंने कहा कि "अपना कुछ थोड़ासा काम करनेके लिये मैंने तुम्हें जिन लोगोंके बीच भेजा है उन्हें देखो। जिस जातिको मैं ऊपर उठा रहा हूं उसका स्वरूप यही है और इसी कारण मैं उसे ऊपर उठा रहा हूं।"

छोटी अदालतमें जब मुकदमा आरंभ हुआ और हम लोग मजिस्ट्रेटके सामने खड़े किये गये तब वहां भी मेरी अंतर्दृष्टि मेरे साथ थी। भगवान्‌ने मुझसे कहा, "जब तुम जेल भेजे गये थे तब क्या तुम्हारा हृदय हताश नहीं हुआ था और क्या तुमने मुझे यह कहकर नहीं पुकारा था कि, कहां, तुम्हारी रक्षा कहां है? अच्छा, तो अब मजिस्ट्रेटकी ओर

देखो, सरकारी वकीलकी ओर देखो।" मैंने नजर उठायी और देखा कि अदालतकी कुर्सीपर मजिस्ट्रेट नहीं बल्कि स्वयं वासुदेव, नारायण बैठे थे। अब मैंने सरकारी वकीलकी ओर देखा और वहां मुझे कोई सरकारी वकील नहीं दिखायी पड़ा, वहां तो श्रीकृष्ण बैठे थे, मेरे सखा, मेरे प्रेमास्पद वहां बैठे हुए मुसकरा रहे थे। उन्होंने कहा, "क्यों, क्या अब भी तुम डरते हो? मैं सभी मनुष्योंमें विद्यमान हूं और उनके सभी कर्मों और शब्दोंका परिचालन करता हूं। मेरा संरक्षण अभी भी तुम्हारे साथ है और तुम्हें डरना नहीं चाहिये। तुम्हारे विरुद्ध यह जो मुकदमा चलाया गया है उसे तुम मेरे हाथोंमें सौंप दो। यह तुम्हारे लिये नहीं है। मैं तुम्हें यहां विचारके लिये नहीं बल्कि किसी और कामके लिये ले आया हूं। यह मुकदमा तो मेरे कार्यका एक साधनमात्र है, इससे अधिक और कुछ नहीं।" इसके बाद जब सेशन जजकी अदालतमें विचार आरम्भ हुआ तब मैं अपने वकीलके लिये ऐसी बहुतसी हिदायतें लिखने लगा कि गवाहीमें मेरे विरुद्ध गुजरी हुई कौनसी बातें मिथ्या हैं और किन-किन बातोंपर गवाहोंकी जिरह की जा सकती है। तब एक ऐसी घटना घटी जिसकी मैं आशा नहीं करता था। मेरे मुकदमेकी पैरवीके लिये जो प्रबन्ध किया गया था वह एकाएक बदल गया।

और मेरे पक्षका समर्थन करनेके लिये एक दूसरे ही वकील खड़े हुए। वे अप्रत्याशित रूपसे आ गये—वे मेरे एक मित्र थे, किन्तु मैं नहीं जानता था कि वे खड़े होंगे। आप सभी लोगोंने उनका नाम सुना होगा जिन्होंने मनसे दूसरे सभी विचारोंको निकाल बाहर किया, इस मुकदमेके सिवा अपनी सारी वकालत बंद कर दी, महीनों लगातार आधी-आधी राततक जगकर मुझे बचानेके लिये अपने स्वास्थ्यको बिगाड़ डाला—वे हैं श्रीचित्तरंजन दास। जब मैंने उन्हें देखा तो मुझे संतोष हो गया, पर अभी भी मैं समझता था कि हिदायतोंका लिखना जरूरी है। इसके बाद यह विचार जाता रहा और मेरे अंदरसे यह आवाज आयी कि "तुम्हारे पैरोंके चारों ओर जो जाल बिछाया गया है उसमेंसे ये ही तुम्हें बाहर निकालेंगे। तुम इन कागजोंको अलग रख दो। इन्हें हिदायत तुम नहीं बल्कि मैं दूंगा।" उस समयसे इस मुकदमेके सम्बन्धमें मैंने अपनी ओरसे अपने वकीलसे एक शब्द भी नहीं कहा, कोई हिदायत नहीं दी और यदि कभी मुझसे कोई सवाल पूछा गया तो मैंने सदा ही यह देखा कि मेरे उत्तरसे मुकदमेको कोई मदद नहीं मिलती थी। मैंने मुकदमेको उन्हें सौंप दिया और उन्होंने सम्पूर्ण रूपसे उसे अपने हाथोंमें ले लिया, और उसका परिणाम क्या हुआ यह आप जानते ही हैं। मैं सदा यह जानता था कि मेरे सम्बन्धमें

भगवान्‌की इच्छा क्या है, क्योंकि मुझे बार-बार वह सुनायी पड़ती थी, सदा मेरे अन्दरसे यह आवाज आया करती थी कि "मैं परिचालन कर रहा हूं, इसलिये डरो मत। मैं तुम्हें जिस कामके लिये जेलमें लाया हूं अपने उस कामकी ओर मुड़ो और जब तुम जेलसे बाहर निकलो तब इस बातको याद रखना कि भय तो कभी नहीं करना होगा, कभी नहीं हिचकना होगा। याद रखो कि यह सब मैं कर रहा हूं, तुम या कोई और व्यक्ति नहीं। अतएव चाहे जितने भी बादल घिर आवें, जितने भी खतरे और दुःख-कष्ट आवें, जितनी भी कठिनाइयां हों, चाहे जो कुछ असंभव प्रतीत हो, कुछ भी असंभव नहीं है, कुछ भी कठिन नहीं है। मैं इस देश और इसके उत्थानके अन्दर हूं और मैं वासुदेव हूं, मैं नारायण हूं और जो कुछ मैं इच्छा करता हूं वही होगा, न कि वह जो दूसरे लोग चाहते हैं। जिस अवस्थाको मैं लाना चाहता हूं उसे कोई मानव-शक्ति नहीं अटका सकती।"

इस बीच वे मुझे उस एकांत कालकोठरीसे बाहर ले आये और मेरे साथ जो अन्यान्य व्यक्ति अभियुक्त हुए थे उनके बीच मुझे लाकर रख दिया। आज आपने मेरे आत्म-त्याग और देशप्रेमके बारेमें बहुत कुछ कहा है। जबसे मैं जेलसे बाहर आया हूं तबसे मैं बराबर ही इस

प्रकारकी बातें सुनता आ रहा हूं, किन्तु इस प्रकारकी बातें सुननेसे मुझे लज्जा होती है, मेरे अन्दर एक तरहकी वेदना होती है । क्योंकि मैं अपनी दुर्बलताको जानता हूं, मैं अपने निजी दोषों और पदस्खलनोंका शिकार हो जाता हूं । इन सब बातोंके विषयमें मैं पहले भी अन्धा नहीं था और मेरे एकांतवासमें, जब ये सब-के-सब मेरे विरुद्ध खड़े हुए, तब तो मैंने इनका बुरी तरह अनुभव किया । तब मुझे मालूम हुआ कि मनुष्यके नाते मैं दुर्बलताओंका एक ढेर हूं, एक सदोष अपूर्ण यन्त्र हूं, और मुझमें तभी ताकत आती है जब कि कोई उच्चतर शक्ति मेरे अन्दर प्रवेश करती है । अब मैं उन युवकोंके बीच आया और मैंने देखा कि उनमेंसे बहुतोंमें एक प्रचण्ड साहस, अपनेको मिटा देनेकी एक शक्ति है जिसकी तुलनामें मैं कुछ भी नहीं हूं। इनमेंसे एक या दोको मैंने ऐसा पाया जो केवल बल और चरित्रमें ही मुझसे बढ़कर नहीं थे—ऐसे तो बहुतेरे थे—बल्कि मैं जिस बौद्धिक योग्यताका अभिमान रखता था, उसमें भी वे बढ़े हुए थे । भगवान्‌ने मुझसे फिर कहा, "यही वह युवक-दल, वह नवीन और बलवान् जाति है जो मेरे आदेशसे ऊपर उठ रही है। ये तुमसे अधिक बड़े हैं। तुम्हें भय किस बातका है? यदि तुम इस कामसे हट जाओ या सो जाओ तो भी यह कार्य संपन्न होगा । कल यदि

तुम इस कार्यसे हटा लिये जाओ तो यह युवक-समुदाय तुम्हारे कामको उठा लेगा और उसे इतनी शक्तिशालिताके साथ करेगा जिसके साथ तुमने कभी नहीं किया होता। तुमने इस देशको एक वाणी सुनानेके लिये मुझसे कुछ शक्ति पायी है और यह वाणी इस जातिको ऊपर उठानेमें सहायक होगी।" यह वह दूसरी बात थी जिसे भगवान्‌ने मुझसे कहा।

इसके बाद अकस्मात् एक घटना घटी और 'क्षणभरमें मुझे एक कालकोठरीके एकांतवासमें शीघ्रतासे पहुंचा दिया गया। इस एकांतवासमें मेरे अन्दर क्या घटित हुआ उसे कहनेकी प्रवृत्ति नहीं हो रही है, केवल इतना ही कहना चाहता हूं कि वहां दिन-प्रति-दिन भगवान्‌ने अपने चमत्कार दिखाये और मुझे हिंदूधर्मके वास्तविक सत्यका साक्षात्कार कराया। पहले मेरे अन्दर अनेक प्रकारके संदेह घुसे पड़े थे। मेरा लालन-पालन विलायतमें विदेशी भावों और सर्वथा विदेशी वातावरणमें हुआ था। हिंदूधर्मकी बहुतसी बातोंको एक दिन मैं मात्र कल्पना समझता था, यह समझता था कि इसमें बहुत कुछ केवल स्वप्न, भ्रम या माया है। परन्तु अब दिन-प्रति-दिन मैं हिंदूधर्मके सत्यको, अपने मन, प्राण और शरीरमें अनुभव करने लगा। वे मेरे लिये जीवंत अनुभव हो गये और मेरे सामने ऐसी सब बातें प्रकट होने

लगीं जिनके बारेमें जड़विज्ञान कोई व्याख्या नहीं दे सकता। भगवान्‌के समीप जब मैं पहले-पहल गया था तब सर्वथा भक्तिभावको लेकर नहीं गया था, सर्वथा ज्ञानीके भावसे भी नहीं गया था। बहुत दिन पहले, स्वदेशी-आन्दोलन आरंभ होनेसे कुछ वर्ष पूर्व बड़ोदामें पहले-पहल मैं उनकी ओर अग्रसर हुआ था और देशके कार्यकी ओर आकृष्ट हुआ था। तब उनमें मेरा जीवंत विश्वास बिलकुल नहीं था। उस समय जब मैं भगवान्‌की ओर अग्रसर हुआ तब मेरे अन्दर अज्ञेय-वादीका भाव था, नास्तिकका भाव था, संदेहवादीका भाव था और भगवान् हैं ही इस विषयमें मैं संपूर्ण रूपसे निश्चित नहीं था। मैं उनकी उपस्थितिका अनुभव नहीं करता था। फिर भी कोई चीज थी जिसने मुझे वेदके सत्यके प्रति, गीताके सत्यके प्रति, हिंदूधर्मके सत्यके प्रति आकर्षित किया। मैंने यह अनुभव किया कि इस योगमें कहींपर कोई महा-शक्तिशाली सत्य अवश्य है, वेदांतपर प्रतिष्ठित इस धर्ममें कोई परम बलशाली सत्य अवश्य है। इसलिये जब मैं योग-की ओर मुड़ा और योगाभ्यास करने और अपनी धारणाकी सत्यताको जाननेके लिये मैंने संकल्प किया तब मैंने उसे इस भाव और इस प्रार्थनासे आरंभ किया। मैंने कहा, "हे भगवान्, यदि तुम हो तो तुम मेरे हृदयकी बात जानते हो। तुम जानते हो कि मैं मुक्ति नहीं मांगता, मैं ऐसी

कोई चीज नहीं मांगता जिसे दूसरे-दूसरे लोग मांगा करते हैं। मैं तो केवल यह मांगता हूं कि इस जातिको ऊपर उठाने-की शक्ति मुझे दो, मैं केवल यह मांगता हूं कि इस देशके लोगोंके लिये, जिन्हें मैं प्यार करता हूं, जीने और कर्म करने-की मुझे आज्ञा दो और यह प्रार्थना करता हूं कि उनके प्रति मैं अपने जीवनको उत्सर्ग कर सकूं।" मैंने योग-सिद्धि लाभ करनेके लिये बहुत दिनोंतक प्रयास किया और अंतमें किसी हदतक वह मुझे मिली भी, पर जिस बातके लिये मेरी अत्यधिक इच्छा थी उसके संबंधमें मैं संतुष्ट नहीं हुआ। तब उस जेलके, उस कालकोठरीके एकांतवासमें मैंने उसके लिये फिर प्रार्थना की। मैंने कहा, "मुझे अपना आदेश दो, मैं नहीं जानता कि कौनसा काम करूं और उसे कैसे करूं। मुझे एक संदेश दो।" इस योगयुक्त अवस्थामें मुझे दो संदेश मिले। पहला यह था, "मैंने तुम्हारे जिम्मे एक काम सौंपा है और वह है इस जातिके उत्थानमें सहायक होना। शीघ्र ही वह समय आवेगा जब तुम्हें जेलके बाहर जाना होगा; क्योंकि मैं नहीं चाहता कि इस बार या तो तुम्हें सजा हो या तुम अपना समय, और-और लोग जिस प्रकार अपने देशके लिये कष्ट सहन करते हुए बिताते हैं, वैसे बिताओ। मैंने तुम्हें कार्य करनेके लिये बुलाया है और यही वह आदेश है जिसकी तुमने प्रार्थना की है। मैं तुम्हें आदेश

लगीं जिनके बारेमें जड़विज्ञान कोई व्याख्या नहीं दे सकता। भगवान्के समीप जब मैं पहले-पहल गया था तब सर्वथा भक्तिभावको लेकर नहीं गया था, सर्वथा ज्ञानीके भावसे भी नहीं गया था। बहुत दिन पहले, स्वदेशी-आन्दोलन आरंभ होनेसे कुछ वर्ष पूर्व बड़ोदामें पहले-पहल मैं उनकी ओर अग्रसर हुआ था और देशके कार्यकी ओर आकृष्ट हुआ था। तब उनमें मेरा जीवंत विश्वास बिलकुल नहीं था। उस समय जब मैं भगवान्की ओर अग्रसर हुआ तब मेरे अन्दर अज्ञेय-वादीका भाव था, नास्तिकका भाव था, संदेहवादीका भाव था और भगवान् हैं ही इस विषयमें मैं संपूर्ण रूपसे निश्चित नहीं था। मैं उनकी उपस्थितिका अनुभव नहीं करता था। फिर भी कोई चीज थी जिसने मुझे वेदके सत्यके प्रति, गीताके सत्यके प्रति, हिंदूधर्मके सत्यके प्रति आकर्षित किया। मैंने यह अनुभव किया कि इस योगमें कहींपर कोई महा-शक्तिशाली सत्य अवश्य है, वेदांतपर प्रतिष्ठित इस धर्ममें कोई परम बलशाली सत्य अवश्य है। इसलिये जब मैं योग-की ओर मुड़ा और योगाभ्यास करने और अपनी धारणाकी सत्यताको जाननेके लिये मैंने संकल्प किया तब मैंने उसे इस भाव और इस प्रार्थनासे आरंभ किया। मैंने कहा, "हे भगवान्, यदि तुम हो तो तुम मेरे हृदयकी बात जानते हो। तुम जानते हो कि मैं मुक्ति नहीं मांगता, मैं ऐसी

कोई चीज नहीं मांगता जिसे दूसरे-दूसरे लोग मांगा करते हैं। मैं तो केवल यह मांगता हूं कि इस जातिको ऊपर उठाने-की शक्ति मुझे दो, मैं केवल यह मांगता हूं कि इस देशके लोगोंके लिये, जिन्हें मैं प्यार करता हूं, जीने और कर्म करने-की मुझे आज्ञा दो और यह प्रार्थना करता हूं कि उनके प्रति मैं अपने जीवनको उत्सर्ग कर सकूं।" मैंने योग-सिद्धि लाभ करनेके लिये बहुत दिनोंतक प्रयास किया और अंतमें किसी हदतक वह मुझे मिली भी, पर जिस बातके लिये मेरी अत्यधिक इच्छा थी उसके संबंधमें मैं संतुष्ट नहीं हुआ। तब उस जेलके, उस कालकोठरीके एकांतवासमें मैंने उसके लिये फिर प्रार्थना की। मैंने कहा, "मुझे अपना आदेश दो, मैं नहीं जानता कि कौनसा काम करूं और उसे कैसे करूं। मुझे एक संदेश दो।" इस योगयुक्त अवस्थामें मुझे दो संदेश मिले। पहला यह था, "मैंने तुम्हारे जिम्मे एक काम सौंपा है और वह है इस जातिके उत्थानमें सहायक होना। शीघ्र ही वह समय आवेगा जब तुम्हें जेलके बाहर जाना होगा; क्योंकि मैं नहीं चाहता कि इस बार या तो तुम्हें सजा हो या तुम अपना समय, और-और लोग जिस प्रकार अपने देशके लिये कष्ट सहन करते हुए बिताते हैं, वैसे बिताओ। मैंने तुम्हें कार्य करनेके लिये बुलाया है और यही वह आदेश है जिसकी तुमने प्रार्थना की है। मैं तुम्हें आदेश

देता हूं कि जाओ और मेरा काम करो।" दूसरा संदेश इस प्रकार था, "इस एक वर्षके एकांतवासमें तुम्हें कुछ दिखा दिया गया है, वह चीज दिखा दी गयी है जिसके बारेमें तुम्हें संदेह था और वह है हिंदूधर्मका सत्य। इसी धर्मको मैं संसारके सामने उठा रहा हूं, यही वह धर्म है जिसे मैंने ऋषि, मुनि और अवतारोंके द्वारा विकसित तथा परिपूरित किया है और अब यह धर्म अन्यान्य जातियोंमें मेरा काम करनेके लिये अग्रसर होने जा रहा है। मैं अपनी वाणीका प्रचार करनेके लिये इस जातिको उठा रहा हूं। यही वह सनातनधर्म है जिसे तुम पहले ठीक-ठीक नहीं जानते थे, किंतु जिसे अब मैंने तुम्हारे सामने प्रकट कर दिया है। तुम्हारे अंदर जो नास्तिकता थी, जो संदेह था उनका उत्तर दे दिया गया है, क्योंकि मैंने आंतर और बाह्य, स्थूल और सूक्षम, सभी प्रमाण दे-दिये हैं और उनसे तुम्हारी परितृप्ति हो गयी है। जब तुम बाहर निकलो तो सदा अपनी जातिको यही वाणी सुनाना कि वे सनातनधर्मके लिये ही उठ रहे हैं, वे अपने लिये नहीं प्रत्युत संसारके लिये उठ रहे हैं। मैं उन्हें संसारकी सेवाके लिये स्वतंत्रता प्रदान कर रहा हूं। अतएव जब यह कहा जाता है कि भारतवर्ष ऊपर उठेगा तो उसका अर्थ होता है सनातनधर्म ऊपर उठेगा। जब यह कहा जाता है कि भारतवर्ष महान् होगा तो उस-

का अर्थ होता है सनातनधर्म महान् होगा। जब यह कहा जाता है कि भारतवर्ष वर्धित और प्रसारित होगा तो इसका अर्थ होता है सनातनधर्म बढ़ेगा और सारे संसारपर छा जायगा। धर्मके लिये और धर्मके द्वारा ही भारतका अस्तित्व है। धर्मकी महिमा बढ़ानेका अर्थ है देशकी महिमा बढ़ाना। मैंने तुमको यह दिखा दिया है कि मैं सर्वत्र हूं, सभी मनुष्यों और सभी वस्तुओंमें हूं, मैं इस आंदोलनमें हूं और मैं केवल उन्हींके अंदर कार्य नहीं करता जो देशके लिये उद्योग कर रहे हैं बल्कि उनके अंदर भी कार्य करता हूं जो उनका विरोध करते और उनके मार्गमें रोड़े अटकाते हैं। मैं प्रत्येक व्यक्तिके अंदर काम कर रहा हूं और मनुष्य चाहे जो कुछ सोचें या करें, पर वे मेरे हेतुको सहायता करनेके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं कर सकते। वे भी मेरा ही काम कर रहे हैं; वे मेरे शत्रु नहीं बल्कि मेरे यंत्र हैं। तुम इस बातको न जाने बिना भी कि तुम किस ओर जा रहे हो, अपनी सारी क्रियाओंके द्वारा अग्रसर हो रहे हो। तुम करना चाहते हो कुछ और पर कर बैठते हो कुछ और। तुम एक परिणामको लक्ष्य बनाते हो और तुम्हारे प्रयास ऐसे हो जाते हैं जो उससे भिन्न या विपरीत परिणाम लाते हैं। शक्तिका आविर्भाव हुआ है और लोगोंमें उसका प्रवेश हुआ है। इस उत्थानकी तैयारी

मैं बहुत दिनोंसे करता आ रहा हूं और अब वह समय आ गया है और अब मैं ही इसे पूर्णताकी ओर ले जाऊंगा।"

यही वह वाणी है जिसे मुझे आपको सुनाना है। आपकी सभाका नाम है "धर्मरक्षिणी सभा"। अस्तु, धर्मका संरक्षण, विश्वके सामने हिंदूधर्मका संरक्षण और अभ्युत्थान—यही कार्य हमारे सम्मुख है। परंतु हिंदूधर्म क्या है? वह धर्म क्या है जिसे हम सनातनधर्म कहते हैं? वह धर्म हिंदूधर्म ही है; क्योंकि हिंदूजातिने ही इसको रखा है, क्योंकि समुद्र और हिमालयसे घिरे हुए इस प्रायद्वीपके एकांतवासमें यह फला-फूला है, क्योंकि इस पवित्र और प्राचीन भूमिपर इसकी युग-युगमें रक्षा करनेका भार आर्यजातिको सौंपा गया था। परंतु यह धर्म किसी एक देशकी सीमासे आबद्ध नहीं है, यह संसारके किसी सीमित भागके साथ विशेष रूपसे और सदाके लिये बंधा हुआ नहीं है। जिसे हम हिन्दूधर्म कहते हैं वह वास्तवमें सनातनधर्म है, क्योंकि यही वह विश्वव्यापी धर्म है जो दूसरे सभी धर्मोंका आलिंगन करता है। यदि कोई धर्म विश्वव्यापी न हो तो वह सनातन नहीं हो सकता। कोई सङ्कीर्ण धर्म, सांप्रदायिक धर्म, अनुदार धर्म किसी मर्यादित काल और किसी मर्यादित हेतुके लिये ही रह सकता है। यही एक धर्म ऐसा है जो अपने अन्दर सांयसके आविष्कारों

और दर्शनशास्त्रकी चिन्तनधाराओंका पूर्वाभास देकर तथा उन्हें अपने अन्दर समावेश करके जड़वादपर विजय प्राप्त कर सकता है। यही एक धर्म ऐसा है जो मानव-जातिके दिलमें इस बातको बैठा देता है कि भगवान् हमारे कितने निकट हैं और जो अपने अन्दर उन सभी साधनोंको समाविष्ट करता है जिनके द्वारा मनुष्य भगवान्के समीप पहुंच सकते हैं। यही एक धर्म ऐसा है जो प्रत्येक क्षण, सभी धर्मोंके द्वारा स्वीकृत इस सत्यपर जोर देता है कि भगवान् प्रत्येक मनुष्य और प्रत्येक वस्तुमें हैं तथा हम उन्हींमें चलते-फिरते हैं और उन्हींमें हम निवास करते हैं। यही एक धर्म ऐसा है जो केवल इस सत्यको समझने और उसपर विश्वास करनेमें ही हमारा सहायक नहीं होता बल्कि अपनी सत्ताके अंग-अंगमें इसका अनुभव करनेमें भी हमारी मदद करता है। यही एक धर्म ऐसा है जो संसारको यह दिखा देता है कि संसार क्या है, दिखा देता है कि यह वासुदेवकी लीला है। यही एक धर्म ऐसा है जो हमें यह दिखा देता है कि इस लीलामें हम अपने हिस्सेको अच्छी-से-अच्छी तरह किस प्रकार खेल सकते हैं, जो हमें यह दिखा देता है कि इसके सूक्ष्म-से-सूक्ष्म नियम क्या हैं, इसके महान्-से-महान् विधान क्या हैं। यही एक धर्म ऐसा है जो जीवनकी छोटी-से-छोटी बातको भी धर्मसे पृथक् नहीं करता, जो यह

जानता है कि अमृतत्व क्या है और जिसने हममेंसे इस भावको ही एकदम निकाल दिया है कि मृत्यु कोई वास्तविक वस्तु है।

यही वह वाणी है जो आपको आज सुनानेके लिये मेरी जबानपर रख दी गयी थी। मैं जो कुछ कहना चाहता था वह तो मुझमेंसे निकाल लिया गया है और जो कुछ मुझे कहनेके लिये दिया गया है उससे अधिक मुझे कुछ नहीं कहना है। जो वाणी मेरे अंदर भरी गयी केवल उसे ही मैं आपको सुना सकता हूं। वह वाणी अब समाप्त हो चुकी है। पहले भी मैंने एक बार आपसे कहा था, और उस समय भी मेरे अंदर यही शक्ति काम कर रही थी और मैंने कहा था कि यह आंदोलन कोई राजनीतिक आंदोलन नहीं है और राष्ट्रीयता राजनीति नहीं है, बल्कि एक धर्म है, एक विश्वास है, एक निष्ठा है। उसी बातको आज फिर मैं दोहराता हूं, किंतु आज मैं उसे दूसरे ही रूपमें उपस्थित करता हू। आज मैं यह नहीं कहता कि राष्ट्रीयता एक विश्वास है, एक धर्म है, एक निष्ठा है, बल्कि मैं यह कहता हूं कि सनातनधर्म ही हमारे लिये राष्ट्रीयता है। यह हिंदूजाति सनातनधर्मको लेकर ही पैदा हुई है, उसीको लेकर यह चलती है और उसीको लेकर यह पनपती है। जब सनातनधर्मकी हानि होती है तब इस जातिकी भी अव-

न्नति होती है और यदि सनातनधर्मका विनाश संभव होता तो सनातनधर्मके साथ-ही-साथ इस जातिका भी विनाश हो जाता। सनातनधर्म ही है राष्ट्रीयता। यही वह संदेश है जिसे मुझे आपको सुनाना है।